डेस्मंड टूटू

शांति के दूत

डेस्मंड टूटू

शांति के दूत

कैरोल, हिंदी : विदूषक

नोबल पुरुस्कार मिलने के बाद प्रेस कांफ्रेंस में डेस्मंड टूटू ने कहा, "यह नोबल पुरुस्कार दुनिया का ध्यान दक्षिण अफ्रीका की रंगभेद समस्या पर केन्द्रित करेगा."

धरमाध्यक्ष बिशप डेस्मंड टूटू को पता था कि 1984 के दिसम्बर में ओस्लो, नॉर्वे में कड़ाके की ठंड होगी. पर उन्हें इस बात का कोई आभास नहीं था कि उन्हें और उनके मेजबानों को हाल के बाहर कड़कड़ाती ठंड में डेढ़ घंटे खड़े रहना पड़ेगा.

डेस्मंड टूटू नोबल पुरस्कार लेने के लिए इस हाल में नॉर्वे आए थे. फिर आखरी मौके पर पुलिस को एक बम्ब की धमकी मिली. किसी ने हाल और बिशप टूटू को उड़ा देने की धमकी दी थी.

डेस्मंड और उनकी पत्नी लिहा टूटू, बम्ब की धमकी ख़त्म होने के बाद नोबल पुरुस्कार समिति के सदस्यों के साथ, ओस्लो यूनिवर्सिटी की सीढ़ियों पर.

"इससे यह साफ़ ज़ाहिर होता है कि हमारे दुश्मन कितने मायूस और निराश है," बिशप टूटू ने कहा.

पुलिस ने हाल का चप्पा-चप्पा छान मारा. उन्हें कोई बम्ब नहीं मिला. उसके बाद सभी लोग वापिस हाल में गए और बिशप टूटू को शांति का नोबल पुरुस्कार दिया गया. बिशप टूटू खुश थे. पर वो दुखी भी थे.

“दक्षिण अफ्रीका में कोई शांति नहीं है,” उन्होंने कहा, “क्योंकि वहां कोई न्याय नहीं है.”

बिशप टूटू ने दक्षिण अफ्रीका में न्याय और शांति के लिए बरसों काम किया था. अपने इस अनूठे काम के लिए उन्हें दुनिया भर की यूनिवर्सिटीज ने पुरस्कारों और मानद डिग्रियों से नवाज़ा था. पर अभी भी कितना काम करने को बाकी पड़ा था.

डेस्मंड म्पिलो टूटू का जन्म 7 अक्टूबर, 1931 में हुआ था. उनके पिता ज़कारिया, मेथोडिस्ट स्कूल में पढ़ाते थे. उनकी माँ अलेत्टा एक घर में नौकरानी थीं. उनका परिवार किर्क्सडोर्प में था. वो ट्रांसवाल, दक्षिण अफ्रीका में एक सोने की खदान के पास था.

शिशु अवस्था में डेस्मंड बहुत कमज़ोर थे. परिवार को लगा वो चल न बसें. इसलिए उनकी दादी ने उन्हें एक विशेष नाम दिया “म्पिलो”. बन्टू भाषा में उसका मतलब होता है “जीवन”. डेस्मंड जीवित रहे.

बड़े होने पर डेस्मंड ने जीवन के संघर्षों से कई बातें सीखीं. उन्होंने सीखा कि दक्षिण अफ्रीका के 70 प्रतिशत लोग अश्वेत थे पर उन्हें वोट देने का अधिकार नहीं था. वो अपने देश में जहाँ चाहें वहां नहीं रह सकते थे. वो अपने देश में जहाँ चाहें, वहां नहीं जा सकते थे. पर सरकार जब चाहती तब उन्हें एक जगह से दूसरी जगह भेज सकती थी.

डेस्मंड ने पाया कि गोरे बच्चों को स्कूलों में मुफ़्त भोजन मिलता था. गोरे बच्चे उस खाने को अक्सर फेंक देते थे. क्योंकि उनके घर का खाना, स्कूल के खाने से बेहतर होता था.

यह भीड़ 1960 में शार्पविल्ले में इकट्ठी हुई. यह जोहानसबर्ग के दक्षिण में अश्वेतों की बस्ती है. यह लोग उस कानून का विरोध कर रहे थे जिसमें अश्वेतों को हमेशा एक पहचान पत्र लेकर चलना पड़ता था जिसपर उनका पता और काम का ब्यौरा लिखा होता था. इस प्रकार सरकार अश्वेतों को गोरों की बस्तियों में आने से रोकती थी. इस फोटो के लेने के कुछ समय बाद पुलिस आई और उसने गोलियां चलाईं जिसमें 64 लोग शहीद हुए और सैकड़ों ज़ख्मी हुए.

पुलिस एक अश्वेत आदमी के पहचान पत्र का निरीक्षण कर रही है. वो आदमी जोहानसबर्ग की खदान में छह महीनों के लिए काम करने जा रहा था. 1986 में पहचान पत्र रखने के क़ानून को बदला गया.

यह अश्वेतों के मिशन स्कूल का आखरी दिन था. सरकार ने कहा कि अश्वेतों को गोरों जैसी शिक्षा नहीं दी जा सकती थी. मिशन स्कूलों ने सरकार के इस कानून को नहीं माना. इसलिए उन्होंने सभी मिशन स्कूल बंद कर दिए.

अश्वेत बच्चों को मुफ्त लंच नहीं मिलता था. डेस्मंड ने उन बच्चों को कूड़ेदानों में खाना बीनते हुए देखा था. अश्वेत बच्चे अक्सर गोरे बच्चों द्वारा फेंका हुआ खाना खाते थे.

रे स्ट्रीट सोफियाटाउन का केंद्र है. यह जोहन्नेस्बेर्ग में अश्वेतों की बस्ती है. पीछे क्राइस्ट का चर्च है.

जब डेस्मंड 12 साल के थे तो उसका परिवार जोहन्नेसबर्ग के बड़े शहर में जाकर बसा. वहां उनकी माँ अंध बच्चों के एक मिशनरी स्कूल में खाना बनाती थीं. स्कूल में डेस्मंड ने लोगों को एक-दूसरे की मदद करते देखा. उसका डेस्मंड पर बहुत गहरा प्रभाव हुआ. उन्होंने निश्चय किया कि वो भी बड़े होकर लोगों की मदद करेंगे.

एक दिन डेस्मंड अपनी माँ के साथ खड़े थे. तभी उनके सामने से एक गोरा आदमी गुज़रा. उसका नाम ट्रेवोर हडेलसन था. वो एक पादरी था और जोहन्नेस्बेर्ग में सोफियाटाउन में अश्वेतों के चर्च में काम करता था.

फिर मिस्टर हडेलसन ने, मिसेज़ टूटू के सम्मान में अपने हैट उठाई. दक्षिण अफ्रीका में गोरे लोग, अश्वेतों को इस प्रकार से सम्मान नहीं देते थे और एक गरीब कामकाजी महिला को तो कभी नहीं.

उस दिन डेस्मंड ने कुछ नया सीखा. उन्हें अश्वेत लोगों के बारे में अफ़सोस करने की कोई ज़रुरत नहीं थी. अश्वेत लोग भी गोरे लोगों जितने ही अच्छे थे.

जोहन्नेस्बेर्ग में काम करने वाले अश्वेत लोग, सोफियाटाउन
की बेहद भीड़ वाली बस्ती में रहते थे (ऊपर).
रंगभेद की नीति के अनुसार सरकार ने झोपड़-पट्टियों को
गिराकर कहीं दूर स्थान पर नए घर बनाए (नीचे).
यह नए घर साफ-सुथरे थे, पर वे अश्वेत लोगों के काम के ठिकानों से बहुत दूर थे.
धीमी बसों में काम तक पहुँचने में उन्हें घंटों लगते थे.

1945 में डेस्मंड माडीबेन हाई-स्कूल में पढ़ने गए. कुछ पैसे कमाने के लिए वे ट्रेन में मूंगफली बेंचते थे और गोल्फ कोर्स में सामान उठाने का काम करते थे. स्कूल ख़त्म करके वे एक डॉक्टर बनना चाहते थे.

पर डॉक्टरी की पढ़ाई बहुत महंगी थी. इसलिए डेस्मंड, प्रिटोरिया के बन्टू नार्मल स्कूल में पढ़ने गए. अब उन्होंने टीचर बनना तय किया.

तभी वो तपेदिक (टी. बी.) से बीमार पड़े. तब उन्हें 20 महीने एक अस्पताल में रहना पड़ा. अब पढ़ाई का क्या होगा? वो उसके बारे में फ़िक्र करने लगे.

हर रोज़ फादर हडेलसन उसे अस्पताल में देखने आते. फादर, डेस्मंड के पढ़ने के लिए किताबें लाते और उससे बातें करते. डेस्मंड ने अभी भी पढ़ाई की उम्मीद नहीं छोड़ी थी. वो अपनी बातों से फादर हडेलसन का चित्त प्रसन्न करते थे.

1957 में बसों के ऊंचे किराये का अश्वेतों ने विरोध किया. उन्होंने यातायात के वैकल्पिक साधन अपनाए जिनमें पैदल चलना शामिल था.

1954 में डेस्मंड ने माडीबेन हाई-स्कूल में पढ़ाना शुरू किया. फिर उन्होंने कृगेर्सडोर्प के मुन्सीविल्ले हाई स्कूल में पढ़ाया. 1955 में डेस्मंड ने लीहा नोमलिजो से विवाह किया. उनके चार बच्चे हुए – तीन लड़कियां और एक लड़का. उन्होंने फादर हडेलसन के नाम के ऊपर अपने बेटे का नाम ट्रेवोर रखा.

1957 में सरकार ने कहा कि अश्वेत बच्चों को गोरे बच्चों जैसी शिक्षा नहीं दी जा सकती थी. अश्वेत बच्चों को "बन्टू शिक्षा" मिलनी चाहिए. बहुत से शिक्षकों को यह निर्णय गलत लगा. उन्होंने विरोध में अपनी नौकरियां छोड़ दीं. डेस्मंड टूटू उनमें से एक थे.

फिर डेस्मंड की ज़िन्दगी बदली. अब उन्होंने एंग्लिकन चर्च में पादरी बनने की पढ़ाई शुरू की. 1961 वे पादरी बने.

शुरू में फादर टूटू ने दक्षिण अफ्रीका के एक चर्च में काम किया. फिर 1962 वो अपने परिवार के साथ इंग्लैंड चले गए. वहां उन्होंने किंग्स कॉलेज, लन्दन में पढ़ाई की और कई चर्चों में काम किया.

1967 में टूटू परिवार दक्षिण अफ्रीका वापिस लौटा. वहां पर फादर टूटू ने, फ़ेडरल थीओलॉजिकल सेमिनरी में पढ़ाया. उसके बाद उन्होंने लेसोथो की नेशनल यूनिवर्सिटी में पढ़ाया.

तमाम लोगों के लिए जोहन्नेस्बेर्ग एक "सुनहरी नगरी" थी. पर उसकी धन-दौलत गोरों के हाथों में थी. यह सम्पदा जोहन्नेस्बेर्ग के पास सोने, हीरों और यूरेनियम की खदानों से पैदा हुई थी.

1972 में टूटू फिर से इंग्लैंड एक स्कालरशिप पर गए. वहां उन्होंने वर्ल्ड कौंसिल ऑफ़ चर्चिस के साथ काम किया.

1975 में फादर टूटू को जोहन्नेस्बेर्ग का एंग्लिकन डीन नियुक्त किया गया. वो एंग्लिकन चर्च के पहले अश्वेत डीन बने.

यहाँ पर अश्वेत विद्रोही जोहन्नेस्बेर्ग से 15 मील दूर सोवेतो टाउनशिप में एक सरकारी बस को आग लगा रहे हैं. अश्वेत लोग 1957 के निर्णय का विरोध कर रहे थे जिसमें अश्वेत स्कूलों में भी डच आधारित अफ़्रीकांस भाषा पढ़ाई जानी थी.

विद्रोही दंगों में मारे गए एक गोरे की लाश के पास पुलिस खड़ी है. उस दंगे में छह लोग मारे गए और चालीस से ज्यादा ज़ख़्मी हुए.

1977 में अश्वेतों ने सोवेतो के मेडोलैंड स्कूल में, सरकार की अफ़्रीकांस नीति के विरोध में पाठ्य-पुस्तकें जलाईं. पुलिस ने 6000 से अधिक विरोधियों को तितर-बितर करने के लिए अश्रु-गैस का प्रयोग किया.

डीन की हैसियत से फादर टूटू ने दक्षिण अफ़्रीकी सरकार का बताया कि उनकी नीतियां अश्वेत लोगों के विरोध में थी. बहुत से अश्वेत लोगों को बिना इलज़ाम के महीनों जेलों में बंद रखा जाता था. डीन टूटू चाहते थे कि दोनों पक्ष अपनी समस्याओं को बातचीत के ज़रिए सुलझाएं. उन्हें पता था कि बहुत से युवा अश्वेत लोग बहुत गुस्से में थे. ऐसे हालात में कुछ भी हो सकता था.

सरकार ने डीन टूटू की बात पर कोई ध्यान नहीं दिया. फिर 16 जून 1976 को, सोवीतो के इलाके में दंगे भड़क पड़े. उसमें 600 अश्वेत लोग मारे गए.

उसी साल डेस्मंड टूटू लेसोथो के बिशप बने. लेसोथो, दक्षिण अफ्रीका के मध्य में एक स्वाधीन देश था. बिशप टूटू चाहते तो वो वहां के नागरिक बन सकते थे. पर उन्होंने ऐसा नहीं किया.

गोरे और अश्वेत छात्रों, दोनों ने जोहन्नेस्बेर्ग में, रंगभेद के खिलाफ विरोध किया. यहाँ वे पुलिस आक्रमण से बचकर भाग रहे हैं.

मोर्चे में भाग लेने वाले एक छात्र को पुलिस गिरफ्तार करते हुए.

बिशप टूटू को दक्षिण अफ्रीका से बहुत प्रेम था. उन्हें इस बात का बेहद दुःख था कि उनका देश, अश्वेतों से इतना दुर्व्यवहार कर रहा था.

1978 में बिशप टूटू, साउथ अफ्रीकन कौंसिल ऑफ़ चर्चेस के जनरल सेक्रेटरी बने. यह समूह ज़रूरतमंद लोगों की बहुत मदद करता था. जिस प्रकार यह समूह राजनैतिक बंदियों की सहायता करता था वो सरकार को बिल्कुल पसंद नहीं था.

1979 में बिशप टूटू ने जो किया वो सरकार को बिल्कुल पसंद नहीं आया. अश्वेतों को शहरों से हटाकर बंजर आदिवासी ज़मीनों पर ले जाकर बसाया जा रहा था. बिशप टूटू ने कहा कि सरकार की जनविरोधी नीतियों के कारण लोग भूखे मर रहे थे.

तब बिशप टूटू ने अमरीका और यूरोप से अपील की कि वे दक्षिण अफ्रीका के साथ व्यापार करना बंद कर दें. जब दक्षिण अफ्रीका को इससे आर्थिक नुकसान होगा तब शायद सरकार अश्वेतों के प्रति अपनी नीतियां बदले.

बिशप टूटू को सबक सिखाने के लिए सरकार ने उनका पासपोर्ट ज़ब्त कर लिया. बिशप टूटू को न्यू-यॉर्क सिटी में स्थित कोलंबिया यूनिवर्सिटी, मानक डॉक्टरेट की डिग्री देने वाली थी. पर बिशप टूटू वहां नहीं जा पाए. पर कोलंबिया यूनिवर्सिटी के प्रेसिडेंट दक्षिण अफ्रीका आए और उन्होंने वो डिग्री बिशप टूटू को प्रदान की. उन्होंने बिशप टूटू को “संयुक्त अफ्रीका के लिए उम्मीद की किरण बताया.”

बिशप डेस्मंड टूटू 1984 में नोबल पुरस्कार मिलने के बाद अपना स्वर्ण पदक पकड़े हुए. नोबल शांति कमेटी के चेयरमैन उनका नोबल डिप्लोमा पकड़े हुए.

1984 के बाद बिशप टूटू न्यू-यॉर्क की जनरल थीओलॉजिकल सेमिनरी में यात्रा कर पाए. वहां 16 अक्टूबर को उन्हें पता चला कि उन्हें नोबल शांति पुरस्कार के लिए चुना गया था. पुरस्कार के उद्धरण में उन सभी अश्वेत दक्षिण अफ्रीकिओं का उल्लेख था जिन्होंने शांतिपूर्ण तरीके से परिवर्तन के लिए काम किया था.

“हम लोगों की जीत हो रही है!” बिशप टूटू ने कहा. “अंत में न्याय की ही जीत होगी.”

अश्वेत लोगों ने प्रदर्शन के दौरान मारे गए एक व्यक्ति के ज़नाज़े में नारे लगाये. उन्होंने रंगभेद के खिलाफ एक बैनर भी लहराया. बाद में पुलिस ने उस समूह को तितर-बितर किया और उनका बैनर छीन लिया.

बिशप टूटू ने नोबल शांति पुरस्कार के 193,000 डॉलर से, गरीब अश्वेत दक्षिण अफ़्रीकी बच्चों के लिए, स्कालरशिप शुरू किए.

नवम्बर 1984 में वे, जोहन्नेस्बेर्ग के बिशप बने. तब उन्होंने साउथ अफ्रीकन कौंसिल ऑफ़ चर्चिस से इस्तीफ़ा दिया. इस बीच विरोध, धरने और मोर्चे चलते रहे. बार-बार बिशप टूटू ने, दोनों खेमों से शांति के साथ बातचीत करने की अपील की.

6 अगस्त 1985 को बिशप टूटू ने, सरकारी पुलिस और अश्वेत लोगों को, एक-दूसरे से आमने-सामने भिड़ते हुए देखा. अश्वेत लोग एक ज़नाज़े के साथ जा रहे थे. पुलिस को लगा कि वे मोर्चा निकाल रहे थे.

बिशप टूटू ने पुलिस से तुरंत अश्वेत लोगों के लिए बसें लाने को कहा. फिर वो अश्वेत लोगों को बसों में बैठकर कब्रिस्तान ले गए. उससे दंगा टल गया.

जब अश्वेत लोग एक शहीद को दफ़नाने जा रहे थे तब फ़ौज आई.

अक्सर अश्वेतों के ज़नाज़े का जलूस सरकार विरोधी और हिंसक मोर्चों में बदल जाता था. 1984 से 1500 से ज्यादा लोग शहीद हुए – उनमें से अधिकांश अश्वेत थे.

पुलिस, बिशप टूटू के सुझाव से सहमत हुई और उसके बाद दफ़नाने का काम शांति से हुआ.

एक अन्य मौके पर बिशप टूटू ने अश्वेतों के एक समूह को, एक पुलिसमैन को पत्थरों से मारते हुए देखा. तब बिशप टूटू उस पुलिसमैन को बचाने के लिए खुद उसके शरीर पर लेट गए. इस तरह उस पुलिसमैन की जान बची.

बिशप टूटू ने दक्षिण अफ्रीका में शांतिपूर्ण परिवर्तन में अपने विश्वास को कई बार दोहराया. उन्होंने दो किताबें भी लिखीं – *क्राइंग इन द विल्डरनेस* और *होप एंड सफरिंग.*

उस समय शब्दों से उस पुलिसमैन की जान नहीं बचती. इसलिए बिशप टूटू ने अपनी ज़िन्दगी को जोखिम में डाला.

वैसे देखने में बिशप टूटू काफी छोटे हैं. उन्हें पढ़ने, दौड़ने, संगीत सुनने और हंसने का शौक है. लोगों को अपने चर्च की कहानियाँ सुनाने में उन्हें बहुत मज़ा आता है. उनकी प्रिय कहानी है बाइबिल में पलायन की. उस कहानी में भगवान ने मिस्त्र में कैद अपने लोगों को रिहा किया.

एक अश्वेतों का समूह बड़े गुस्से में पुलिस के मुखबिर को पीट रहा था. तब बिशप टूटू उस भीड़ में घुसे और वे लोगों पर चिल्लाए, "उसे मारना बंद करो!" फिर उन्होंने उस आदमी को कार में डलवाकर तुरंत वहां से निकलवाया. "बिशप टूटू ने निश्चित रूप से उस आदमी की जान बचाई," एक रिपोर्टर ने लिखा.

बिशप टूटू मानते हैं कि आज भी भगवान अपने लोगों को मुक्त देखना चाहता है. बिशप टूटू के अनुसार यीशू धरती पर सभी लोगों को मुक्त कराने के लिए आए थे – चाहें वे गोरे हों या काले. इसीलिए वे दक्षिण अफ्रीका के अश्वेत लोगों की मुक्ति के लिए इतनी मेहनत और लगन से काम करते हैं.

1986 में कोरेटा स्कॉट किंग (बाएं) ने बिशप टूटू को मार्टिन लूथर किंग शांति पुरस्कार से नवाज़ा. बीच में मार्टिन लूथर किंग की बहन क्रिस्टीन किंग फारिंस और बिशप टूटू की बेटी म्फो हैं (दाएं). फिर उन्होंने एबेनेज़ेर बैप्टिस्ट चर्च, एटलांटा, जॉर्जिया के समारोह में भी भाग लिया.

बिशप टूटू जहाँ कहीं भी हों वे रंगभेद के खिलाफ अपनी आवाज़ उठाते हैं.

यह काम आसान नहीं है – न ही इसमें सुरक्षा की कोई गारंटी है. पर बिशप टूटू कहते हैं कि उन्हें डर नहीं लगता है. उनके अनुसार सरकार भी उन्हें रोक नहीं सकती क्योंकि वो वही कर रहे हैं जो भगवान चाहते हैं.

“जब मैं अपने आसपास अन्याय देखता हूँ तो मुझसे चुप नहीं रहा जाता है. अधिक-से-अधिक वो मुझे क़त्ल कर सकते हैं. किसी इसाई के लिए उसकी मौत सबसे खराब बात नहीं होती.”

डेस्मंड म्पिलो टूटू

कालरेखा

1931	7 अक्टूबर को किर्क्सडोर्प, ट्रांसवाल, दक्षिणी अफ़्रीका में जन्म
1950	माडीबाना हाई स्कूल, जोहन्नेस्बेर्ग में पढ़ाई
1953	प्रेटोरिया बन्टू नार्मल कॉलेज से टीचर डिप्लोमा
1954	यूनिवर्सिटी ऑफ़ साउथ अफ़्रीका से बी.ए. की डिग्री
1955	लीहा नोर्मलिज़ा से विवाह
1955-56	मुन्सीविल्ले हाई स्कूल, क्रुगेरडोर्प में अध्यापन
1961	एंग्लिकन चर्च के पादरी बने
1965	किंग्स कॉलेज, लन्दन से बैचलर ऑफ़ डिविनिटी की डिग्री
1966	किंग्स कॉलेज, लन्दन से मास्टर्स ऑफ़ डिविनिटी की डिग्री
1967-69	फ़ेडरल थीओलॉजिकल कॉलेज, दक्षिण अफ़्रीका में अध्यापन
1969-71	नेशनलओ यूनिवर्सिटी ऑफ़ लेसोथो में अध्यापन
1972-75	थीओलॉजिकल एजुकेशन फण्ड, इंग्लैंड के एसोसिएट डायरेक्टर
1975	जोहन्नेस्बेर्ग में एंग्लिकन डीन
1976	लेसोथो के बिशप
1978-84	साउथ अफ़्रीका कौंसिल ऑफ़ चर्चेस के सेक्रेटरी जनरल
1984	शांति के नोबल पुरस्कार से सम्मानित, जोहन्नेस्बेर्ग के बिशप बने
1986	केपटाउन के आर्चबिशप